भारत का विधि आयोग

स्त्रियों और बालकों का विक्रय

भारतीय दंड संहिता

में

प्रस्तावित धारा 373क

विषय पर

एक सौ छियालीसवीं रिपोर्ट

1993

गोपनीय

के० एन० सिंह

(भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधिपति)

अध्यक्ष
विधि आयोग
भारत सरकार
शास्त्री भवन
नई दिल्ली–110001
फोन : 384475––कार्यालय
3019465––घर

अ० शा० पत्र० सं० 6(3) (19)–एल सी (एल एस), 26 फरवरी, 1993

प्रिय प्रधान मंत्री जी,

हाल ही के वर्षों में भारत में स्त्रियों और बालकों के विक्रय की सामाजिक बुराई बढ़ती ही जा रही है। यह बुराई तात्विक रूप से हमारे समाज के निर्धन वर्ग में व्याप्त है। सभी मानव प्राणियों को, और विशेषकर स्त्रियों और बालकों को विशेष विधिक सुरक्षा की आवश्यकता है क्योंकि वे शोषण के विशेष रूप से शिकार हैं। विधि आयोग ने, निर्धनों के प्रति सामाजिक न्याय के प्रकाश में, इस विषय के महत्व को ध्यान में रखते हुए, स्वतः इस विषय पर विचार किया है। यद्यपि भारतीय दंड संहिता में ऐसे कतिपय उपबंध हैं जो एक निश्चित आयु से कम उम्र के व्यक्तियों का विक्रय करके या अन्य प्रकार से अंतरण करके विस्तारण करने से संबंधित हैं किन्तु ये उपबंध ऐसे मामलों तक सीमित हैं जहां ऐसा संव्यवहार उन धाराओं म विनिर्दिष्ट किसी प्रयोजन के लिए किया जाता है। किंतु जहां ऐसा प्रयोजन विद्यमान न हो या विचारण के दौरान साबित न हो सके वहां ये उपबंध स्त्रियों और बालकों के हित म पर्याप्त सरक्षोपाय नहीं हैं।

विधि आयोग ने इस विषय पर विस्तार से विचार किया है और "स्त्रियों और बालकों का विक्रय" विषय पर भारत के विधि आयोग की 146वीं रिपोर्ट तथा उक्त सामाजिक बुराई के निवारण के लिए भारतीय दंड संहिता में धारा 373क जोड़ने का प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत प्रसन्नता हो रही है।

13वें विधि आयोग की यह तीसरी रिपोर्ट है।

सादर,

भवदीय,

ह०
(के० एन० सिंह)

आदरणीय श्री पी० वी० नरसिंह राव,
प्रधान मंत्री तथा विधि, न्याय और कंपनी कार्य मंत्री,
नई दिल्ली।

प्रतिलिपि :

आदरणीय श्री हंसराज भारद्वाज,
विधि, न्याय और कम्पनी कार्य राज्य मंत्री,
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली।

विषय सूची

		पृष्ठ
अध्याय 1	भूमिका	1
अध्याय 2	वर्तमान विधिक स्थिति	2
अध्याय 3	विधि में संशोधन करने की आवश्यकता	3
अध्याय 4	सिफारिश	7

अध्याय 1

भूमिका

1.1. रिपोर्ट का आरंभ

इस रिपोर्ट में जिस विषय की चर्चा की जा रही है उसे भारत के विधि आयोग ने, सामाजिक न्याय की पृष्ठभूमि म इस विषय के महत्व को ध्यान में रखते हुए स्वतः विचार के लिए उठाया है ।

1.2. सामाजिक बुराई

स्त्रियों और बालकों के विक्रय की सामाजिक बुराई हाल ही के कुछ वर्षों में भारत में बढ़ती जा रही है ।[1] भारतीय दंड संहिता में ऐसे कुछ उपबंध एक विशिष्ट आयु से नीचे के व्यक्तियों के विक्रय या किसी अन्य पद्धति से अंतरण द्वारा व्ययनित किए जाने के संबंध में सम्मिलित किए गए हैं किन्तु ये उपबंध केवल उन मामलों तक सीमित हैं जहां कोई संव्यवहार उन धाराओं में विनिर्दिष्ट प्रयोजनों में से किसी एक के लिए किया जाता है । जहां ऐसा उद्देश्य विद्यमान नहीं हो अथवा विचारण के दौरान साबित न किया जा सके वहां इन धाराओं का उपयोग नहीं किया जा सकता । विधि आयोग ने यह अनुभव किया कि इस विषय की परीक्षा विद्यमान विधि में किसी कमी का, जो कि ऐसी परीक्षा के परिणामस्वरूप प्रकाश में आए, सुधारने की दृष्टि से करने की आवश्यकता है ।

सत्य यह है कि किसी भी मानव प्राणी का इस बीसवीं शताब्दी में वस्तु की तरह व्यवहार करने की अनुमति नहीं दी जा सकती, विशेष रूप से स्त्रियों और बालकों को विधि के संरक्षण की आवश्यकता है क्योंकि उनका शोषण अदभूत रूप से किया जाता है ।

भारत का संविधान "शोषण के विरुद्ध अधिकारों" की घोषणा संविधान द्वारा गारंटीकृत मूल अधिकारों के भाग के रूप में करता है, विशेष रूप से अनुच्छेद 23 को देखा जा सकता है। शोषण के विरुद्ध अधिकार उच्चतम न्यायालय के समक्ष अनेक मामलों[2] में आया है ।

इस अधिकार को मान्यता प्रदान की गई है और अनेक कानूनी उपबंधों में अधिकथित इसके उल्लंघन के लिए दंड की व्यवस्था की गई है । तथापि, इस तथ्य के कारण कि किन्हीं विनिर्दिष्ट संव्यवहारों के विरुद्ध ऐसे प्रतिषेध आवश्यक समझे गए थे, यह अर्थ नहीं निकलता कि विधि सिद्धांत में ऐसे व्यवहारों को विधिमान्य समझा जाता है । साथ ही यदि दांडिक विधि किसी भी प्रकार से त्रुटिपूर्ण पाई जाती है तो स्पष्ट रूप से यह वांछनीय है कि इस स्थिति पर विचार किया जाए जो आवश्यक प्रतीत हो ।

तदनुसार, वर्तमान रिपोर्ट में स्त्रियों और बालकों के विक्रय तथा तत्समान संव्यवहारों से संबंधित विधि की परीक्षा, उनमें कुछ सुधारों का प्रस्ताव रखने की दृष्टि से, यदि आवश्यक समझे गए हों, की जा रही है ।

1.3. विचार-विमर्श की योजना

उपरोक्त उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए हम इस रिपोर्ट में वर्तमान विधि स्थिति और उसमें कमी की परीक्षा करने के लिए अग्रसर हो रहे हैं । विधि में संशोधन करने की बाबत हमारी सिफारिशें इस रिपोर्ट के अंत में दी गई हैं ।

---

1. देखें निहाल सिंह **बनाम** राम बाई, ए आई आर, 1987 म० प्र० 126 ।

2. पीपल्स यूनियन आफ डेमोक्रटिक राइट्स **बनाम** भारत का संघ, ए आई और 1982 उ० न्या० 1473, संजीत राय **बनाम** राजस्थान राज्य, ए आई आर 1983 उ० न्या० 328; सलाल हाइड्रोइलेक्ट्रिक परियोजना **बनाम** जम्मू और कश्मीर राज्य, ए आई आर 1984 उ० न्या० 177; बंधुआ मुक्ति मोर्चा **बनाम** भारत का संघ, ए आई आर 1984, उ० न्या० 802; और नीरजा चौधरी **बनाम** म० प्र० राज्य, ए आई आर 1984 उ० न्या० 1099 ।

अध्याय 2

वर्तमान विधिक स्थिति

2.1. भारतीय दंड संहिता के उपबंध : धारा 372 और 373

इस रिपोर्ट में विचारणीय विषय के निकटतम उपबंध भारतीय दंड संहिता की धारा 372 और 373 में हैं।[1] ये धाराएं उन धाराओं में विनिर्दिष्ट प्रयोजन के लिए किसी बालक के विक्रय, भाड़े पर देने या अन्यथा व्ययनित करने का प्रतिषेध करते हैं। और साथ-साथ इसके विपरीत किसी विनिर्दिष्ट प्रयोजन के लिए किसी बालक को खरीदने, भाड़े पर लेने या अन्यथा उसका कब्जा अधिप्राप्त करने का प्रतिषेध करते हैं। ये धाराएं 18 वर्ष की आयु से कम के किसी व्यक्ति के बेचने, आदि से संबंधित हैं।

2.2. सीमित विस्तार

क्योंकि ये धाराएं किसी विनिर्दिष्ट प्रयोजन के लिए किए गए संव्यवहार तक सीमित हैं अतः इनकी परिधि भी सीमित है। मोटे तौर पर उक्त दोनों धाराओं की परिधि वेश्यावृत्ति के लिए अथवा किसी व्यक्ति से अयुक्त संभोग करने के लिए अथवा किसी विधि विरुद्ध या दुराचारिक प्रयोजन के लिए विक्रय तक सीमित है। धारा 372 का स्पष्टीकरण 2 (जो धारा 373 को भी लागू होता है) "अयुक्त संभोग" को परिभाषित करता है जिसका अर्थ है "ऐसे व्यक्तियों से मैथुन जो विवाह से संयुक्त नहीं हैं या ऐसे किसी संयोग या बंधन से संयुक्त नहीं है जो विवाह की कोटि में तो नहीं आते तथापि उस समुदाय की, जिसके वे हैं, या यदि वे भिन्न समुदाय के हैं तो ऐसे दोनों समुदायों की, स्वीय विधि या रूढ़ि द्वारा उनके बीच में विवाह सदृश संबंध अभिज्ञात किया जाता है।"

2.3. दत्तक अधिनियम

इस स्थान पर, दिलचस्पी के रूप में, संबंधित दत्तक तथा भरण-पोषण अधिनियम, 1956 में आने वाले एक उपबंध का उल्लेख भी किया जा सकता है। उक्त अधिनियम की धारा 17 उस अधिनियम के अधीन किसी बालक के दत्तक को दत्तक में देने के फलस्वरूप कोई संदाय प्राप्त करने का प्रतिषेध करती है।[2]

यह स्पष्ट है कि उक्त धारा केवल उन मामलों तक सीमित है जहां किसी बालक का विक्रय दत्तक के संबंध में किया जाता है या दत्तक के साथ किया जाता है। इस उपबंध की कोई उपयोगिता नहीं है और उसका लाभ वहां नहीं दिया जा सकता जहां प्रश्नगत कुप्रथा का कोई संबंध दत्तक ग्रहण से नहीं हो। यह रिपोर्ट प्राप्त हुई है कि एक संव्यवहार, जिसका बारह हजार रुपए के लिए दत्तक विक्रय के साथ कोई संबंध नहीं था, बिना सजा के छूट गया।[3]

2.4. संविदा की बाबत विधिक स्थिति

संभवतः यह बताने की आवश्यकता अनावश्यक है कि किसी स्त्री या बालक का "विक्रय" सिविल बाध्यता के प्रयोजनों के लिए विधिमान्य संविदाजन्य संव्यवहार नहीं माना जाएगा। मध्य प्रदेश के एक मामले[4] में, एक स्त्री का "विक्रय" (यद्यपि खुले बाजार में नहीं) किया गया था, खरीदने वाले ने इस आधार पर प्रतिफल के प्रतिदाय के लिए वाद प्रस्तुत किया कि विक्रय जिस प्रयोजन के लिए किया गया था वह पूरा नहीं हुआ। वादी (एक स्त्री) ने प्रतिवादी के साथ एक समझौता किया था कि वह वादी के पुत्र के लिए पत्नी के रूप में एक डांगी लड़की उपलब्ध कराएगी। प्रतिवादी ने वादी के घर एक लड़की भेजी जिसने ऐसा दर्शाया कि वह डांगी लड़की थी। किन्तु वह लड़की वादी के पुत्र के साथ केवल 20 दिन रहने के पश्चात् अपने गांव वापस चली गई। तदनन्तर वादी को यह ज्ञात हुआ कि वह लड़की एक नाचने वाली लड़की थी। वादी ने अपना पैसा वापस लेने के लिए मुकदमा किया। प्रतिवादी ने यह विवाद किया कि उक्त करार अप्रवर्तनीय था। विचारण न्यायालय ने और प्रथम अपीली न्यायालय ने भी वाद को डिक्री किया। दूसरी अपील में उच्च न्यायालय ने डिक्री को खारिज कर दिया क्योंकि उक्त करार से संविधान के अनुच्छेद 23 का उल्लंघन होता था और वाद स्वीकार करने योग्य नहीं था।

यह उल्लेख भी किया जा सकता है कि एक अन्य मामले में, जिसका विनिश्चय उसी उच्च न्यायालय द्वारा किया गया था,[5] इस प्रस्थापना को मान्यता प्रदान की गई कि व्यक्तियों के साथ वस्तुओं जैसा व्यवहार नहीं किया जा सकता।

2.5. संशोधन की आवश्यकता

हम अगले अध्याय में इस प्रश्न पर विस्तारपूर्वक विचार करेंगे कि दंड संहिता के उपबंध उस सामाजिक बुराई, जिसका इस रिपोर्ट से संबंध है, को दूर करने के लिए पर्याप्त हैं या नहीं हैं।

1. पाठ के लिए नीचे पैरा 3.8 देखें।
2. नीचे पैरा 3.11 देखें।
3. "दि ट्रिब्यून," 23 दिसम्बर, 1992, पृष्ठ 3।
4. निहाल सिंह बनाम राम बाई, ए आई आर 1987 म० प्र० 126, 127।
5. मनोहर दलाल बनाम म० प्र० राज्य ए आई आर 1987 म० प्र० 132, 134।

अध्याय 3

विधि में संशोधन करने की आवश्यकता

3.1. वर्तमान धारा में कमी

ऐसा प्रतीत होता है कि वर्तमान विधिक स्थिति में, जिसका सार ऊपर दिया गया है, एक महत्वपूर्ण पहलू में, गंभीर कमी है। इसमें ऐसे मामलों के लिए कोई व्यवस्था नहीं है जहां किसी व्यक्ति को सामान्य रूप में बेचा जाता है और जहां इस प्रकार से बेचे गए व्यक्ति का उपयोग भारतीय दंड संहिता की धारा 372 और 373 में विनिर्दिष्ट प्रयोजन के लिए करने का उद्देश्य नहीं है। विशेष रूप से, इन धाराओं में किसी अवयस्क को विवाह के लिए बेचने की स्थिति से निपटाने की क्षमता है नहीं है।

यह भी उल्लेखनीय है कि यह धाराएं वयस्क स्त्रियों की बिक्री या खरीद के मामले को लागू नहीं होती। हमारा यह मत है कि इन दोनों दृष्टियों से विधि में एक विनिर्दिष्ट दांडिक उपबंध होना चाहिए। विस्तृत कारण अगले कुछ पैराओं में दिए गए हैं।

3.2. संवैधानिक पक्ष

भारत के संविधान के अनुच्छेद 23 में, अन्य बातों के साथ-साथ, मानव के दुर्व्यापार का प्रतिषेध किया गया है और यह कहा गया है कि ऐसा व्यवहार विधि द्वारा दंडनीय अपराध होगा। यह एक मूल अधिकार है और यह स्पष्ट है कि संविधान का यह आशय है कि इस विषय में कानून की पुस्तक में आवश्यक विधि होनी चाहिए। निस्संदेह, इसका यह अर्थ नहीं है कि इस प्रयोजन के लिए एक नई विधि (संविधानपूर्व) अधिनियमित की जानी चाहिए।

इसके अतिरिक्त, संविधान में अंतर्निहित सामाजिक न्याय का जो वृहत उद्देश्य है और राज्य की नीति के निदेशक तत्वों के भाग में जो विनिर्दिष्ट उपबंध हैं, जिनमें यह निदेश दिया गया है कि राज्य को स्त्रियों और बालकों के शोषण का प्रतिषेध करना चाहिए उसका अर्थ यह है कि शोषण की प्रकृति के हर व्यवहार को निरुत्साहित किया जाना चाहिए।

संविधान का आदेश है कि—

(i) विद्यमान कानूनों की विषय-वस्तु का यह विचार करने के लिए अध्ययन किया जाए कि वे कहां तक संविधान के आदेश को क्रियान्वित करते हैं, और

(ii) यदि विद्यमान कानून को अपर्याप्त पाया जाए तो विधि में आवश्यक संशोधन किया जाए।

इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि स्त्रियों और बालकों का विक्रय, ऐसे विक्रय का उद्देश्य कुछ भी क्यों न हो, मानव का दुर्व्यापार है अथवा ऐसे दुर्व्यापार के लक्षण उसमें विद्यमान हैं। यदि यह तर्क भी दिया जाए कि "दुर्व्यापार" का अर्थ है एक सुव्यस्थित आचरण (अर्थात् कार्यों की एक शृंखला) और उसके अंतर्गत विक्रय का कोई एक कार्य नहीं आता है तो इस बात पर बल दिया जाना चाहिए कि ऐसे विक्रय अपने आप में अनुच्छेद 23 की आत्मा पर आघात पहुंचाता है भले ही शब्दों पर आघात न करता हो।

3.3. विधायी क्षमता

इस संदर्भ में, यह संकेत करना समीचीन है कि जहां कोई विशिष्ट सामाजिक दुष्प्रथा संविधान के अनुच्छेद 23 का उल्लंघन करती है[1] तो संविधान के अनुच्छेद 35(क)(i) के आधार पर संसद् इस विषय पर विधि बनाने के लिए सक्षम है। इसके अतिरिक्त, समवर्ती सूची की प्रविष्टि 2 के अंतर्गत, अन्य बातों के साथ-साथ, दांडिक विधि के बारे में कानून बनाना (जिसके अंतर्गत संविधान के प्रारंभ के समय भारतीय दंड संहिता में सम्मिलित विषय भी हैं) संसद् की क्षमता के अंतर्गत है।

3.4. अपराध की क्षमता

इस प्रश्न का समर्थन करने के लिए बहुत तर्क की आवश्यकता नहीं है कि मानव प्राणी का विक्रय (चाहे वह किसी भी आयु का हो अथवा स्त्री हो या पुरुष हो) एक अत्यंत घृणापूर्ण प्रकार का समाज विरोधी काम है चाहे उसका प्रयोजन कुछ भी क्यों न हो। यह उन सभी बातों का विनाश करता है जिनके लिए मानव ने एक सुस्वीकृत समाज के निर्माण की प्रगति के पथ पर शताब्दियों से यात्रा की है और उसे प्राप्त करना चाहा है। यह कार्य निश्चित रूप से ऐसे मानव प्राणियों के एक वर्ग का सृजन करता है और सभ्य समाज के सभी आदर्शों का विध्वंस करता है।

1. ऊपर पैरा 2.4।

ऐसा व्यवहार उस व्यक्ति को, जिसके साथ ऐसा व्यवहार किया जाता है, महान क्षति पहुंचाता है। इस बात से वह पुरुष या स्त्री मानव प्राणी की सब से बहुमूल्य वस्तु को, अर्थात्, ऐसे व्यक्ति के आदर को, तथा उसकी पहचान और अपने सम्मान के प्रति उसकी जागरूकता को नष्ट करता है। किसी व्यक्ति को इससे और बड़ी हानि क्या हो सकती है कि उसके सम्मान को आहत कर दिया जाए। उसका अपने प्रति आदर विलुप्त हो जाए और उसकी आत्मा का पतन हो जाए। वह समाज जो ऐसे व्यवहार को सहन करता है न केवल अपने नैतिक स्तर का गिराने का ही नुकसान करता है अपितु उस व्यक्ति के प्रति, अन्याय के अपराध का दोषी भी है और अन्ततोगत्वा सामाजिक संरचना को भी क्षति पहुंचाता है।

3.5. उपरोक्त तर्क की सुसंगता

ये तर्क नए नहीं हैं। ये उन अधिकांश सामाजिक सुधारकों के मस्तिष्क में विद्यमान रहे हैं जिन्होंने सामाजिक संरचना तथा रुढ़ियों को स्थापित करने, संगठित करने या समेकित करने का प्रयास किया है। ये प्रस्थापनाएं किसी न किसी रूप में इतिहास के क्रम में गत समय में पुरुषों और स्त्रियों की अनेक संततियों के प्रति संबोधित की गई हैं और यद्यपि यह दुर्भाग्य की बात है फिर भी भविष्य में आने वाली संततियों को भी इन तर्कों को सुनना आवश्यक हो सकता है। किन्तु इन सभी पहलुओं को वर्तमान संदर्भ में एक नया महत्व प्राप्त हो गया है। स्त्रियों और बालकों के विक्रय से संबंधित वर्तमान विधि क्योंकि संपूर्ण या व्यापक नहीं है अत उसका संशोधन करने की आवश्यकता है। और यह भी सत्य है कि विधि का संशोधन विशेष रूप से, दांडिक विधि में एक नया अपराध जोड़कर संशोधन लाकर तभी प्रभावी हो सकता है जब उसकी आवश्यकता के पीछे ऐसा आधार हो जिसका नैतिक स्तर पर अपनी समाधानपूर्ण शक्ति हो।

3.6. बुराई की व्यापकता और निरंतरता

यह सत्य है कि केवल यह तथ्य कि कतिपय सामाजिक दुष्प्रथा किसी विशिष्ट समाज में विद्यमान है आवश्यक रूप से इस बात का प्रमाण नहीं है कि वह विधि में हस्ताक्षेप करने के लिए समुचित कारण हो। कानूनी स्वीकृतियों का प्रयोग करने की भी अपनी सीमाएं हैं विशेष रूप से दांडिक स्वीकृतियों के संबंध में। उच्च नैतिक आदर्शों का प्रत्येक विचलन का इलाज विधिक उपायों से नहीं हो सकता। अनेक मामलों में कानून के बलपूर्ण तंत्रों का प्रयोग करना उचित नहीं है। अनेक बार उस स्थिति में भी जहां सिद्धांत में ऐसा करना उपयुक्त हो, विधि में हस्तक्षेप करना व्यवहारिक दृष्टि से प्रभावपूर्ण नहीं हो सकता। इन कठिनाइयों के अतिरिक्त दांडिक सजा का उपयोग करने में मितव्ययता का प्रश्न भी उठता है। किन्तु वर्तमान मामले में इन तर्कों का संतुलन उन आधारभूत मूल्यों से हो जाता है जो उन विभिन्न प्रस्थापनाओं का मूल आधार हैं जिनकी चर्चा हमने इस अध्याय के कुछ पूर्वतर पैराओं में की है। इसके अतिरिक्त, जिस दुष्प्रथा से हमारा संबंध है वह संबंधित व्यक्तियों और समाज को गंभीर क्षति पहुंचाती है। इसके अतिरिक्त, दंड संहिता का वह संशोधन, जिसको इस रूप में करने का हम रिपोर्ट में विचार कर रहें हैं जहां तक हमें प्रतीत होता है, विधि का प्रवर्तन करने वाले तंत्र पर, असम्यक प्रभाव नहीं डालेगा। ऐसे संशोधन का आशय, विद्यमान दांडिक उपबंधों के सिद्धांत में एक मामूली ऐसा विस्तार करना है और इसके कारण कोई गंभीर व्यावहारिक विसंगतियां उत्पन्न होने की संभावना नहीं है।

3.7. कुछ हाल ही के उदाहरण

इस प्रक्रम पर हमें यह उल्लेख करना उचित प्रतीत होता है कि स्त्रियों और बालकों को बेचने की दुष्प्रथा, जिसके दुष्प्रभाव और उसकी जो निंदा की जानी चाहिए वह उन ऐसे विक्रयों के कतिपय वास्तविक उदाहरणों से प्रकट होते हैं जिनकी रिपोर्ट हाल ही में की गई है।[1] इसी पृष्ठभूमि में हम विधि की परीक्षा करेंगे।

3.8. भारतीय दंड संहिता की धारा 372 और 373

स्त्रियों और बालकों के बेचने की सामाजिक बुराई से निपटने के लिए दंड संहिता में, प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से कुछ उपबंध किए गए हैं। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है[2] विचारणीय विषय से संबंधित निकटतम उपबंध भारतीय दंड संहिता की धारा 372 और 373 में हैं, जो निम्नलिखित प्रकार से हैं :—

> **372. वेश्यावृत्ति आदि के प्रयोजन के लिए अप्राप्तवय को बेचना**—जो कोई अठारह वर्ष से कम आयु के किसी व्यक्ति को इस आशय से कि ऐसा व्यक्ति किसी आयु में भी वेश्यावृत्ति या किसी व्यक्ति से अयुक्त संभोग करने के लिए या किसी विधिविरुद्ध और दुराचारिक प्रयोजन के लिए काम में लाया या उपयोग किया जाए या यह संभाव्य जानते हुए कि ऐसा व्यक्ति, किसी आयु मे भी ऐसे किसी प्रयोजन के लिए काम में लाया

1. ऊपर पैरा 2.2 और 2.4 देखें। ऐसी रिपोर्ट मिली है कि एक दो वर्षीय बालिका अपने चाचा द्वारा रु० 80,000 के लिए बेची गई। "इंडियन एक्सप्रेस", 3 दिसम्बर, पृष्ठ 1।
2. ऊपर परा 2.1।

जाएगा या उपयोग किया जाएगा, बेचेगा, भाड़े पर देगा या अन्यथा व्ययनित करेगा, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा।

स्पष्टीकरण 1—जब कि अठारह वर्ष से कम आयु की नारी किसी वैश्य को या किसी अन्य व्यक्ति को जो वेश्यागृह चलाता हो या उसका प्रबंध करता हो, बेची जाए, भाड़े पर दी जाए या अन्यथा व्ययनित की जाए, तब इस प्रकार ऐसी नारी को व्ययनित करने वाले व्यक्ति के बारे में, जब तक कि तत्प्रतिकूल साबित न कर दिया जाए, यह उपधारणा की जाएगी कि उसने उसको इस आशय से व्ययनित किया है कि वह वेश्यावृत्ति के लिए उपयोग में लाई जाएगी।

स्पष्टीकरण 2—"अयुक्त संभोग" से इस धारा के प्रयोजनों के लिए ऐसे व्यक्तियों में मैथुन अभिप्रेत है जो विवाह के संयुक्त नहीं हैं, या ऐसे किसी संभोग या बन्धन से संयुक्त नहीं हैं जो यद्यपि विवाह की कोटि में तो नहीं आता तथापि उस समुदाय की, जिसके वे हैं, या यदि वे भिन्न समुदायों के हैं तो ऐसे दोनों समुदायों की, स्वीय विधि या रूढ़ि द्वारा उनके बीच में विवाह-सदृश संबंध अभिज्ञात किया जाता हो।

373. वेश्यावृत्ति, आदि के प्रयोजन के लिए अप्राप्तवय का खरीदना—जो कोई अठारह वर्ष से कम आयु के किसी व्यक्ति को इस आशय से कि ऐसा व्यक्ति किसी आयु में भी वेश्यावृत्ति या किसी व्यक्ति से अयुक्त संभोग करने के लिए या किसी विधिविरुद्ध दुराचारिक प्रयोजन के लिए काम में लाया या उपयोग किया जाए या यह संभाव्य जानते हुए कि ऐसा व्यक्ति किसी आयु में भी ऐसे किसी प्रयोजन के लिए काम में लाया जाएगा या उपयोग किया जाएगा, खरीदेगा, भाड़े पर लेगा, या अन्यथा उसका कब्जा अभिप्राप्त करेगा, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा।

स्पष्टीकरण 1—अठारह वर्ष से कम आयु की नारी को खरीदने वाली, भाड़े पर लेने वाली या अन्यथा उसका कब्जा अभिप्राप्त करने वाली किसी वेश्या के या वैश्यागृह चलाने या उसका प्रबंध करने वाले किसी व्यक्ति के बारे में, जब तक कि तत्प्रतिकूल साबित न कर दिया जाए, यह उपधारणा की जाएगी कि ऐसी नारी का कब्जा उसने इस आशय से अभिप्राप्त किया है कि वह वेश्यावृत्ति के प्रयोजनों के लिए उपयोग में लाई जाएगी।

स्पष्टीकरण 2—"अयुक्त संभोग" का वह अर्थ है जो धारा 372 में है।

3.9. भारतीय दंड संहिता की धारा 372–373 की सीमाएं

भारतीय दंड संहिता की धारा 372 और 373 को उद्धृत करने के पश्चात् हम यह उल्लेख करना चाहेंगे कि (संहिता वर्तमान प्रयोजन के लिए संगत है) इन धाराओं का प्रवर्तन दो महत्वपूर्ण सीमाओं के अध्यधीन है।

(क) पहली बात तो यह कि वे अठारह वर्ष की आयु से कम व्यक्ति को बेचने (या खरीदने), भाड़े पर देने अथवा भाड़े पर लेने) अथवा अन्य प्रकार से व्ययनित करने (अथवा व्ययनित द्वारा अर्जित करने) तक सीमित हैं। उनके अंतर्गत वयस्क का विक्रय, आदि नहीं आता।

(ख) दूसरी बात यह कि, ये धाराएं इन धाराओं में विनिर्दिष्ट प्रयोजनों में से किसी के लिए किए गए संव्यवहार तक सीमित हैं। मोटे तौर पर, ये प्रयोजन निम्नलिखित हैं :—

(i) वेश्यावृत्ति,

(ii) किसी व्यक्ति के साथ अयुक्त संभोग, अथवा ;

(iii) कोई विधिविरुद्ध और दुराचारिक प्रयोजन।

इस प्रकार, अठारह वर्ष से अधिक आयु के व्यक्ति के विक्रय के लिए सजा नहीं है और उक्त धाराओं में विनिर्दिष्ट प्रयोजनों से भिन्न प्रयोजन के लिए किसी विक्रय के लिए कोई सजा नहीं है।

3.10. संशोधन की आवश्यकता

उक्त दो धाराओं की इस सीमित परिधि के कारण ही संशोधन की आवश्यकता पैदा होती है। हमें विश्वास है कि इन विधिक उपबंधों की परिधि का विस्तार करने का न्यायोचित्य है जिससे कि उन मामलों के लिए भी उपबंध किया जाए जहां किसी स्त्री या बालक को बेचा जाता है, ऐसे संव्यवहार का स्पष्ट या दूरगामी उद्देश्य कुछ भी क्यों न हो तथा ऐसा उद्देश्य स्पष्ट हो अथवा

स्पष्ट हो । हमने इस अध्याय के प्रारंभिक पैराओं में उन कुछ महत्वपूर्ण कारणों का वर्णन किया है जिन्हें इस विषय में कोई कदम उठाते समय ध्यान में रखना चाहिए । उन सभी बातों की पुनरावृत्ति आवश्यकता नहीं है जो उन पैराओं में कही गई हैं । इतना कहना पर्याप्त होगा कि किसी मानवप्राणी का विक्रय–विशेष रूप से वहां जहां किसी ऐसे व्यक्ति का प्रश्न हो जिसे विधि में विधि संरक्षण प्रदान करने की आवश्यकता है–केवल ऐसी दुष्प्रथा नहीं माना जाना चाहिए जिसकी विधि निंदा करे बल्कि ऐसे व्यवहार के लिए दांडिक शास्तियों की व्यवस्था भी की जानी चाहिए । यदि कोई विधिविरुद्ध या दुराचारिक प्रयोजन विद्यमान है तो उससे अपराध की गंभीरता बढ़ जाएगी; किन्तु ऐसे प्रयोजन के अभाव में भी ऐसे व्यवहार की बुराई समाप्त नहीं हो जाएगी । ऐसा संव्यवहार विक्रय किए गए, भाड़े पर दिए गए अथवा अन्य प्रकार से व्ययनित किए गए व्यक्ति की मानवता को ही नष्ट कर देता है । ऐसे कार्य को करने वाली की दृष्टि से भी यह एक चरित्र हनन कार्य है क्योंकि विधि ऐसे कार्य करने वाले को सजा नहीं देती तथा वह ऐसे व्यक्ति को मानव मूल्यों के प्रति एक नफरत उत्पन्न करता है और निरंतर उत्पन्न करता रह सकता है और मानव सम्मान का निरादर है । ऐसा व्यक्ति मानव प्राणियों के प्रति एक वस्तु के रूप में व्यवहार करता है जिनका उपयोग शारीरिक उद्देश्य के लिए किया जा सकता है । अतः, विद्यमान विधि में जो कमी है उसे दूर करने की आवश्यकता है ।

3.11. हिन्दू दत्तक अधिनियम की धारा 17

हम विद्यमान विधि के बारे में अपनी सिफारिशें समय आने पर करेंगे ।[1] इस समय हिन्दू दत्तक तथा भरण-पोषण अधिनियम, 1956 में सम्मिलित कुछ दिलचस्प उपबंधों का उल्लेख करना चाहेंगे । इस अधिनियम की धारा 17 निम्नलिखित प्रकार से है :–

"17. कुछ संदाय का प्रतिषेध

(1) किसी व्यक्ति के दत्तक के प्रतिफलस्वरूप कोई भी व्यक्ति कोई संदाय या अन्य इनाम न तो प्राप्त करेगा और न प्राप्त करने के लिए करार करेगा और न ही कोई भी व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को कोई ऐसा संदाय करेगा या इनाम देगा या करने से या देने के लिए करार करेगा जिसका प्राप्त करना इस धारा द्वारा प्रतिषिद्ध है ।

(2) यदि कोई व्यक्ति उपधारा (1) के उपबंधों का उल्लंघन करेगा तो वह ऐसे कारावास से, जो छह मास तक का हो सकेगा, या जुर्माने से, या दोनों से दंडनीय होगा ।

(3) इस धारा के अधीन कोई भी अभियोजन राज्य सरकार की या राज्य सरकार द्वारा तन्निमित प्राधिकृत किसी आफिसर की पूर्व मंजूरी के बिना संस्थित नहीं किया जाएगा ।"

1. अध्याय 4, नीचे ।

अध्याय 4

सिफारिश

4.1. भारतीय दंड संहिता में धारा 373क अंत:स्थापित करने के बारे में सिफारिश

पूर्ववर्ती अध्यायों में किए गए विचार-विमर्श के प्रकाश में हम यह सिफारिश करते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 373 के पश्चात् निम्नलिखित रूप में एक नई धारा अंत:स्थापित की जाए :–

'373क स्त्री या अवयस्क, आदि को बेचना–

(1) जो कोई, ऐसे मामले में जो धारा 372 या धारा 373 के अंतर्गत नहीं आता है,–

(क) किसी व्यक्ति को, जो अठारह वर्ष से कम आयु का है, अथवा किसी भी आयु की किसी स्त्री को बेचेगा, भाड़े पर देगा या अन्यथा व्ययनित करेगा, अथवा

(ख) किसी व्यक्ति को या किसी स्त्री को प्रतिफल के लिए बेचेगा, भाड़े पर लेगा या अन्यथा अभिप्राप्त करेगा

वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।

(2) इस धारा के उपबंध विकृतचित्त के व्यक्ति के संबंध में भी, उसी प्रकार लागू होंगे जैसे वे अठारह वर्ष से कम आयु के व्यक्ति के संबंध में लागू होते हैं ।

स्पष्टीकरण–इस धारा की कोई बात किसी व्यक्ति की सेवाओं को भाड़े पर लेने के संबंध में लागू नहीं होगी ।

4.2. पारिणामिक परिवर्तन

भारतीय दंड संहिता में उपरोक्त धारा को अंत:स्थापित करने पर, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की पहली अनुसूची में पारिणामिक संशोधन करने की आवश्यकता होगी । उक्त अनुसूची का संबंध अपराधों को जमानतीय आदि के रूप में वर्गीकृत करने से है । यह सुझाव दिया जाता है कि नए सृजित अपराध–

(क) संज्ञेय,

(ख) अजमानतीय, और

(ग) सेशन न्यायालय द्वारा ही विचारणीय होने चाहिए ।

4.3. विकृतचित्त के व्यक्ति

एक छोटी सी बात का उल्लेख करना आवश्यक है । विकृतचित्त का व्यक्ति, कम से कम सैद्धांतिक रूप से, विचारणीय दुराचारण का पात्र हो सकता है । व्यवहार में ऐसे मामले अधिक नहीं हो सकते किन्तु नई धारा में उन्हें सम्मिलित किया जाना चाहिए । भारतीय दंड संहिता की विद्यमान धारा 372–373[1] के अंतर्गत विकृतचित्त के ऐसे व्यक्ति नहीं आते हैं जिन्हें वेश्यावृत्ति के लिए या अयुक्त संभोग के लिए या किसी विधिविरुद्ध और दुराचारिक प्रयोजन के लिए किया जाए । आयोग का यह मत है कि उपरोक्त धाराओं में ऐसे व्यक्तियों को सम्मिलित करने के लिए भी उपयुक्त संशोधन किया जाना चाहिए ।

4.4. प्रस्तावित अपराध व्यपहरण से भिन्न है

यह उल्लेख किया जा सकता है कि किसी अवयस्क बालक का (भारतीय दंड संहिता की धारा 372–373 के अंतर्गत सम्मिलित किए जाने के लिए) बेचा जाना अपहरण के साथ नहीं जोड़ा जा सकता–व्यपहरण या अपहरण का अपराध ऐसा अपराध है जिसका संबंध संरक्षकता के अधिकारों के उल्लंघन से है । (धारा 361 के अंतर्गत अविधिपूर्ण संरक्षण से व्यपहरण की दशा में) अथवा जहां अपराध भारत से व्यपहरण का है (धारा 360) अथवा अपहरण का है (धारा 362) जिसमें असद्भावपूर्वक अथवा धोखा देकर किसी के वैयक्तिक स्वातंत्र्य का उल्लंघन होता है, उससे संबंधित है । माता-पिता या अन्य संरक्षक की ओर से कोई दुर्व्यवहार, जिस पर हम विचार कर रहे हैं, संरक्षण के दुरुपयोग तथा संरक्षण के अधीन रहने वाले

1. ऊपर पैरा 3.8 ।

बालक के सम्मान के उल्लंघन की प्रकृति का अधिक है । स्पष्ट है कि ऐसा अपराध ऐसे व्यक्ति द्वारा भी किया जा सकता है जो बालक का संरक्षक नहीं है किन्तु ऐसे मामले में भी यह अपराध मानव संबंध के उल्लंघन की प्रकृति का है जिसका परिणाम अनेक मामलों में बालक का शोषण होगा ।

4.5. अभिरक्षा से हटना

यह भी पूर्ण रूप से उचित नहीं होगा कि हम उस सीमा तक पहुंच जाएं जिसमें माता-पिता की विधिक अभिरक्षा से किसी बालक का किसी भी रीति से या पद्धति से हटाया जाना दंडनीय हो । ऐसे उपबंध से अनेक कठिनाइयां पैदा हो सकती हैं, उदाहरण के लिए, यह प्रश्न कि किन परिस्थितियों में माता-पिता किसी बालक को सह माता-पिता की अभिरक्षा से हटा सकता है (वहां जहां माता-पिता के बीच संबंध अच्छे न हों) और ऐसे ही अन्य प्रश्न भी उठ सकते हैं । न्यायालयों के सामने ऐसी अनेक समस्याएं हैं जो भारतीय दंड संहिता की धारा 361 के मामलों का निपटारा करते समय आई हैं । उस धारा के अंतर्गत, किसी अवयस्क को (यदि पुरुष है तो सोलह वर्ष से कम आयु, या यदि स्त्री है तो अठारह वर्ष से कम आयु) या विकृतचित्त के किसी व्यक्ति को संरक्षक की सम्मति के बिना विधिपूर्ण संरक्षण से ले जाना या फुसला कर ले जाना विधिक संरक्षण से व्यपहरण का अपराध है । किसी ऐसे व्यक्ति के, जो अन्य बातों के साथ साथ, सद्भावपूर्वक यह विश्वास करता है कि वह किसी बालक की विधिपूर्ण सुरक्षा का हकदार है, कार्य एक अपवाद है सिवाए वहां जहां ऐसा कार्य किसी विधिविरुद्ध या दुराचारिक प्रयोजन के लिए किया जाता है । ये उलझने उस धारा से पैदा होंगी जिसकी संरचना हमने ऊपर की है । सिद्धांत की दृष्टि से भी हमारा संबंध यहां संरक्षक अथवा व्यक्तिगत स्वातंत्र्य के अधिकार से उतना नहीं है जितना कि इस व्यापक सिद्धांत से है कि किसी बालक के साथ वस्तु जैसा व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए ।

हम तदनुसार सिफारिश करते हैं ।

ह०
(के० एन० सिंह०)
अध्यक्ष

ह०
(एस रंगनाथन)
सदस्य

ह०
(डी एन० संदनशिव)
सदस्य

ह०
(सरदार अली खां)
सदस्य (अंशकालिक)

ह०
(पी० एम० बक्शी)
सदस्य (अंशकालिक)

ह०
(एम० मार्कस)
सदस्य (अंशकालिक)

ह०
(चि० प्रभाकर राव)
सदस्य-सचिव

93-M/J(N)350MofLJ&CA—200—8-8-94—GIPS

पीएलडी. 92. सीपीएलआई (एच)
200—1994(डीएलके-IV)

मूल्य : देश में—65.00 रुपये ; विदेश में—2 पौंड 10 शिलिंग 1 पेंन्स या 3 डॉलर 90 सैंट्स

1994
प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, शिमला द्वारा मुद्रित तथा
प्रकाशन-नियन्त्रक, सिविल लाईन्स, दिल्ली द्वारा प्रकाशित ।